शोध मंथन, Impact Factor 5.463 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X,
310 Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com/* https://doi.org/10.31995/shodhmanthan

गौतम, बौधायन एवं आपस्तम्ब में संस्कार

डॉ० रीना
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभागाध्यक्ष
साहू जैन कॉलेज, नजीबाबाद,
जिला–बिजनौर, उ०प्र०
ईमेलः reenasgr7@gmail.com

सारांश

मनुष्य के जीवन को समुन्नत तथा विकसित बनाने के लिए प्राचीन भारतीय चिन्तकों के जिन व्यवस्थाओं की नियोजना की थी, उनमें संस्कारों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान था। मनुष्य के जन्म से मृत्यु पर्यन्त इन संस्कारों की महती उपादेयता थी। संस्कार मनुष्य के मात्र इस जीवन को ही नही अपितु पारलौकिक जीवन को भी सफल करते हैं। संस्कारों से संस्कृत तथा आत्मगुणों से युक्त व्यक्ति ब्रह्मलोक में ब्रह्मपद को प्राप्त करता है, जिससे वह पुनः च्युत नहीं होता है।[1] डॉ0 राजबली पाण्डेय के मतानुसार इनका उद्देश्य केवल औपचारिक देहिक संस्कार न होकर, संस्कार्य व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार शुद्धि और पूर्णता भी है।[2] लक्ष्मीदत्त ठाकुर का मत है कि संस्कारों का उद्देश्य शारीरिक सौन्दर्य की वष्द्धि मात्र नहीं है, अपितु इनके द्वारा आत्मा का अभ्युदय भी किया जाता था।[3]

संस्कार का अभिप्राय

''संस्क्रियते अनेन इति संस्कारः'' अर्थात् जिससे किसी पदार्थ को शुद्ध, पवित्र अथवा परिमार्जित किया जाए, वह संस्कार है।[4] जैमिनी ने संस्कार का अर्थ यज्ञ के पवित्र तथा निर्मल कार्यों को किया है।[5] भाष्यकार शबर स्वामि के अनुसार– ''संस्कारो नाम स भवति यस्मिनजाते पदार्थो भवति योग्यः कस्यचिदर्थस्य।[6] अर्थात संस्कार वह क्रिया है, जिसके सम्पन्न होने पर कोई पदार्थ अथवा व्यक्ति किसी कार्य के योग्य हो जाता है। इसी अर्थ से साम्यता रखते हुए तन्त्रवर्तिकार ने कहा है– ''योग्यतां चादधानाः क्रियाः संस्कारा इत्युच्यन्ते।[7] अर्थात् योग्यता प्रदान करने वाली क्रियाएं संस्कार कहलाती है।

गौतम, बौधायन एवं आपस्तम्ब धर्मसूत्रों में अन्य धर्मसूत्रों की ही तरह संस्कारों के विषय में विस्तृत सामग्री प्राप्त नहीं होती है, तथापि प्रसंगवशात् उपनयन, समावर्तन तथा विवाह से सम्बन्धित संस्कारों का विवेचन किया गया है। गौतम ने ''संस्कारैः संस्कृतः'' पद का प्रयोग किया है, जिससे संकेत प्राप्त होता है कि गौतम के अनुसार संस्कार वह साधन होता है कि जिसके करने से मनुष्य संस्कृत अर्थात् परिमार्जित अथवा पवित्र होता है।[8]

संस्कारों की संख्या

धर्मशास्त्रों में संस्कारों की संख्या को लेकर पर्याप्त मतभेद दृष्टिगोचर होते है। बौधायन एवं आपस्तम्ब ने संस्कारों की कोई निश्चित संख्या का निर्धारण अपने धर्मसूत्रों में नहीं किया है। किन्तु गौतम धर्मसूत्र में संस्कारों की संख्या चालीस बताई गई है।[9] इनमें 1. गर्भाधान, 2. पुंसवन, 3. सीमन्तोन्नयन, 4. जातकर्म, 5. नामकरण, 6. अन्नप्राशन, 7. चौलकर्म, 8. उपनयन (9 से 12) वेदों के चार व्रत, 13. स्नान, 14. विवाह (15 से 19) ब्रह्म, देव, पितृ, भूत एवं मनुष्यादि पाँच महायज्ञ, (20 से 26) अष्टका, पार्वण, श्राद्ध, श्रावणी, आग्रहायणी, चैत्री तथा आश्वयुजी आदि सात पाकयज्ञ, (27 से 33) अग्न्याधेय, अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास आग्रयण, चातुर्मास्य, निरूढपशुबन्ध तथा सौत्रामणि आदि सात हवियज्ञ, (34 से 40) अग्निष्टोम, अत्यग्निटोम, उक्थ्य, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र तथा आप्तोर्याम आदि सात सोमयज्ञ परिगणित है।[10] राजबली पाण्डेय के मतानुसार गौतम धर्मसूत्र में उल्लिखित इस संस्कारों की सूची में हमें संस्कारों तथा यज्ञों में कोई स्पष्ट विभेद दृष्टिगत नहीं होता है। समस्त गृह्यकृत्यों तथा श्रोतयज्ञों को जिनका ब्राह्मणों तथा श्रोतसूत्रों में विशद् वर्णन मिलता है, उपरिलिखत सूची में संस्कारों के साथ संयुक्त कर दिया गया है। यहाँ संस्कार शब्द का प्रयोग सामान्य रूप से समस्त धार्मिक कृत्यों के अर्थ में किया गया है।[11]

संस्कारों का परिचय

गर्भाधान :– गर्भाधान जन्म से पूर्व का संस्कार है। विवाहोपरान्त जिस कर्म के द्वारा पुरूष अपने शुक्र का स्त्री में आधान करता है। उसे गर्भाधान कहते हैं। अनेक शास्त्रकारों ने इसे निषेक, चतुर्थीकर्म अथवा चतुर्थीहोम नाम से सम्बोधित किया है।[12] मात्र बौधायन तथा काठक ने इसे गर्भाधान संस्कार नाम से अभिहित किया है।[13] वास्तव में इस संस्कार का उद्देश्य सृष्टि की निरन्तरता तथा पितृऋण से उऋण होने के लिए सन्तानोत्पत्ति करना था इसी बात का ध्यान रखते हुए धर्मसूत्रकारों ने गृहस्थ का मुख्य कर्त्तव्य सन्तानोत्पत्ति करना बताया है।[14]

पुंसवन :– गर्भाधान संस्कार के पश्चात् गर्भधारण का निश्चय हो जाने पर यह संस्कार किया जाता था।[15] इस संस्कार का उद्देश्य गर्भस्थ शिशु को पुत्र रूप देना था।[16] गौतम धर्मसूत्र में चालीस संस्कारों के अन्तर्गत यह संस्कार परिमाणित है।[17] आपस्तम्ब, बौधायन एवं जैमिनी के अनुसार तिष्य नक्षत्र में यह संस्कार किया जाता था।[18] यह संस्कार भी प्राक्जन्य संस्कार है तथा पुत्रोत्पत्ति में सम्भावित बाधाओं के निवारण के उद्देश्य से इसका आयोजन किया जाता था।

सीमन्तोन्यन :– गर्भस्थ शिशु का तृतीय तथा अन्तिम संस्कार सीमान्तोन्नयन था इसका उल्लेख गौतम धर्मसूत्र में प्राप्त होता है।[19] कतिपय शास्त्रकारों ने इसे सीमान्त अथवा सीमन्तकरण नाम्ना भी सम्बोधित किया है।[20] यह संस्कार दुष्ट शक्तियों से गर्भ की रक्षार्थ किया जाता था।[21] राजबलि पाण्डेय के मतानुसार इस संस्कार का धार्मिक प्रयोजन माता के ऐश्वर्य तथा अनुत्पन्न शिशु के लिए दीर्घायुष्य की प्राप्ति था। जैसा कि इस अवसर पर पठित ऋचाओं से प्रकट होता है।[22]

जातकर्म :– बालक के जन्म के उपरान्त यह प्रथम संस्कार सम्पन्न होता था।[23] गौतम ने संस्कारों की गणना में इसे चतुर्थ स्थान पर रखा है। सूत्रकारों के अनुसार यह संस्कार प्रसवोपरान्त नाल काटने एवं स्तनपान से पूर्व किया जाता था।[24] सन्तानोत्पत्ति मानव समाज तथा सृष्टि की स्थिरता का मुख्य आधार है। इसी कारण भारतीय धर्माचार्यों ने बालक के जन्म से सम्बन्धित विधि विधानों का विस्तार से वर्णन किया।

नामकरण :– नाम समस्त लौकिक व्यवहारों का हेतु है, नाम्नेव कीर्ति लभते मनुष्यस्ततः प्रशस्तं खलु नामकर्म[25] गौतम ने इसे संस्कारों में परिगणित किया है।[26] अधिकांश सूत्रकारों के मत में यह संस्कार जन्म के बाद दसवें अथवा बारहवें दिन किया जाता था।[27] किन्तु कुछ सूत्रकारों का मानना है कि जन्मोपरान्त दसवें दिन से लेकर द्वितीय वर्ष के प्रथम दिवस पर्यन्त यह संस्कार किया जा सकता था।[28] राजबली पाण्डेय के अनुसार इस व्यापक विकल्प का कारण परिवार की सुविधा तथा माता एवं शिशु का स्वास्थ्य था।[29]

निष्क्रमण :– जन्मोपरान्त बालक को घर से बाहर प्रथम बार निकालने की प्रक्रिया को निष्क्रमण संस्कार कहते हैं। यह संस्कार बालक के जन्म के चतुर्थ मास में किया जाता था।[30] इस संस्कार के द्वारा बालक का बाहरी समाज से सम्पर्क स्थापित होता था।

अन्नप्राशन :– यथा नाम्ना ही स्पष्ट है, इस संस्कार में बालक को पहली बार अन्न खिलाया जाता था। प्रायः यह संस्कार जन्म के छठे मास में किया जाता था।[31] आपस्तम्ब एवं आश्वलायन के अनुसार इस अवसर पर पिता दधी, मधु तथा धष्त मिश्रित अन्न ''अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्रदातारन्तारिष ऊर्जन्नो धेति द्विपदे चतुष्पद इति।।'' मंत्र के उच्चारण के साथ बालक को भोजननार्थ देता था।[32]

चौल (चूडाकरण) :– इस संस्कार के द्वारा प्रथम बार बालक के केश काटकर एकमात्र शिखा छोड दी जाती थी। वर्तमान में इसे मुण्डन अथवा केशोच्छेदन संस्कार नाम से जाना जाता है। यह संस्कार जन्म के प्रथम अथवा तृतीय वर्ष में किया जाता था।[33] किन्तु अपने कुल की परंपराओं के अनुसार भी यह संस्कार किया जाता था।

कर्णबेध :– कर्णबेध संस्कार गौतम द्वारा परिगणित 40 संस्कारों में उपलब्ध नहीं होता है।[34] कुछ गृह्यसूत्रों तथा स्मृतियों में इस संस्कार का उल्लेख बहुत ही न्यून प्राप्त होता है। बौधायन तथा कौषितक गृह्यसूत्रों के अनुसार यह संस्कार जन्म के उपरान्त सप्तम अथवा अष्टम माह में करना चाहिए।[35]

विद्यारम्भ :– विद्यारम्भ संस्कार के माध्यम से बालक को वर्णज्ञान कराया जाता था। धर्मशास्त्रकारों ने इसे 'अक्षराम्भ' 'अक्षरस्वीकरण' व 'अक्षरलेखन' आदि पृथक–पृथक नामों से भी सम्बोधित किया है।[36] गृह्यसूत्रों, धर्मसूत्रों तथा प्राचीन स्मृतियों में इस संस्कार का वर्णन प्राप्त नहीं होता है।[37]

उपनयन :– 'नीम प्रापणे' धातु से ल्युट प्रत्यय के योग से निष्पन्न उपनयन का अर्थ है समीप ले जाना।[38] वेदाध्ययनार्थ विद्यार्थी को आचार्य के समीप ले जाने के कारण ही इस

संस्कार का नाम उपनयन तथा बौधायन ने मौञ्जीबन्धन नाम्ना सम्बोधित किया है।[39] उपनयन होने पर इन वर्णो का द्वितीय जन्म होता है अतः ये वर्ण द्विज कहे जाते है।[40] उपनयन का विधान ब्राह्मण क्षत्रिय तथा वैश्य वर्णों के लिए था। शूद्रों के लिए नही था।[41] उपनयन होने पर इन वर्णो का द्वितीय जन्म होता है, अतः ये वर्ण द्विज कहे जाते है।[42] ब्राह्मण बालक का उपनयन आठवें, क्षत्रिय का ग्यारहवें तथा वैश्य का बारहवें वर्ष में करना चाहिए।[43]

वेदारम्भ :– उपनयन के पश्चात् वेदारम्भ द्वितीय शैक्षणिक संस्कार था। प्राचीन काल में उपनयन के पश्चात ही वेदाध्ययन प्रारम्भ हो जाता था, किन्तु परवर्ती समय में जब सम्भवतः संस्कृत लोकभाषा नहीं रही तक उपनयन मात्र दैहिक संस्कार बनकर रह गया। यही कारण है कि प्रारम्भिक सूत्रग्रन्थों तथा स्मृतियों व्यास स्मृति में इस संस्कार का उल्लेख प्राप्त होता है।[44] जिससे स्पष्ट होता है कि व्यास स्मृति की रचना के समय में उपनयन का शिक्षा से सम्बन्ध समाप्त हो गया था।

केशान्त :– इस संस्कार के द्वारा सर्वप्रथम उपनीत विद्यार्थी की दाढ़ी–मूछों आदि आदि केशों का क्षौर किया जाता था। प्रायः यह संस्कार 16 वर्ष की आयु में किया जाता था।[45] इस संसार को गोदान संस्कार भी कहा जाता था, क्योंकि इस अवसर पर छात्र आचार्य को गाय दान स्वरूप देता था।[46] सूत्रकारों के मत में इस अवसर पर संस्कार्य व्यक्ति को अपने समस्त अंगों के केशों यथा बगल, वक्षस्थल, उपस्थ, शिखा आदि को कटवाना चाहिए।[47] केशान्त तथा चूडाकरण संस्कार में मूलभेद यह था कि चूडाकरण में शिखा का कर्तन नहीं होता था जब कि इस संस्कार में शिखा भी कटवाई जाती थी।[48]

समावर्तन :– समावर्तन ब्रह्मचर्य आश्रम की समाप्ति का सूचक था। समावर्तन का अर्थ है– ''समावर्तन नाम वेदाध्ययनानन्तरम्। गुरूकुलात्स्वगृहागमनम्।[49] अर्थात् वेदाध्ययन के पश्चात गुरूकुल से अपने घर लौटना। बौधायन ने भी समावर्तन का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है– ''वेदमधीत्य स्नास्यन्नित्युक्तं समावर्तनम्।।''[50] अर्थात् वेदाध्ययन कर किया गया स्नान ही समावर्तन है। गौतम तथा बौधायन ने इसे स्नान तथा आपस्तम्भ ने समावर्तन नाम्नाही अभिहित किया है।[51]

विवाह :– विवाह अत्यन्त महत्वपूर्ण संस्कार है। विवाह उपर्सग पूर्वक वह धातु से धञ प्रत्यय के योग से निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है कि परिणय अर्थात् वह शास्त्रीय प्रथा जिसके अनुसार स्त्रीपुरूष दाम्पत्य सूत्र में आबद्ध होते है।[52] गौतम के अनुसार ''सहधर्मचारिणी संयोगो विवाहः'' अर्थात् सहधर्मचारिणी पत्नी के साथ संयोग होना विवाह है।[53] विवाह के अर्थ में पाणिग्रहण शब्द का प्रयोग भी प्राप्त होता है।[54] विवाह समावर्तन संस्कार के बाद किया जाता था। गौतम का माना है कि समावर्तन के बाद विवाह करके गृहस्थ धर्म का पालन करना चाहिए।[55]

अन्त्येष्टि :– यह व्यक्ति का अन्तिम संस्कार था जो वह व्यक्ति नहीं अपितु उसके परिजन उसकी मृत्यु के पश्चात् सम्पन्न करते थे। गौतम द्वारा परिगणित 40 संस्कारों में यह संस्कार परिगणित नहीं है। राजबली पाण्डेय इसका कारण यह मानते है कि सम्भवतः इसका

अशुभ होना था तथा मरणोपरान्त इस संस्कार का व्यक्ति के परिष्कार पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं पड़ना भी इसका कारण हो सकता है। पुनरपि कालान्तर में इसकी गणना संस्कारों में होने लगी थी।[56] बौधायन के मतानुसार जन्मोत्तर संस्कारों से व्यक्ति इस लोक को जीतता है तथा मरणोपरान्त संस्कार से परलोक को विजित करता है।[57]

इस प्रकार जन्म से पूर्व लेकर मृत्यु के बाद तक संस्कारों का अत्याधिक महत्व था। गर्भाधान तथा प्राक्जन्म संस्कार यौन विज्ञान एवं प्रजनन शास्त्र की शिक्षा देने का कार्य करते थे, उपनयनादि शैक्षिक संस्कार शिक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण थे। विवाह संस्कार दो व्यक्तियों में परस्पर सहयोग की भावना का विकास करता था तथा परिवार एवं समाज के प्रति दायित्वों का बोध करता था। अन्त्येष्टि संस्कार पारिवारिक तथा सामाजिक स्वास्थ्य विज्ञान का एक विस्मयजनक समन्वय था जो जीवित परिजनों को सांत्वना प्रदान करता था। मनु ने संस्कारों को इद्रलोक एवं परलोक में पवित्र करने वाला बताया है।[58] गौतम का कथन है कि जो व्यक्ति संस्कारों तथा आठ आत्मगुणों से युक्त होता है। ब्रह्म का समुज्य एवं ब्रह्मलोक में निवास प्राप्त करता है।[59] आपस्तम्भ का कथन है कि संस्कारों से युक्त व्यक्ति श्रेष्ठ फलों के भागी होते है।[60]

संदर्भ

1. संस्कारैः संस्कृतः पूर्वैरूत्तैरनु संस्कृतः। नित्यमष्टगुणैर्युक्तो ब्राह्मणों ब्राह्म लौकिकः ब्राह्मंपदमवाप्नोति यस्मान्नच्यवते पुनः।। वीर मित्रोदय, भाग–1, पृष्ठ–140
2. राजबली पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृष्ठ–19
3. लक्ष्मीदत्त ठाकुर, प्रमुख स्मृतियों का अध्ययन, पृष्ठ–76
4. वामन शिवराम आप्टे, सं.हि. को, पृष्ठ–1051
5. पूर्वमीमांसा, 3/2/14, 3/8/3, 9/2/9, 9/3/25, 9/4/33, 9/4/50
6. जैमिनीय शाबरभाष्य 3/1/3
7. तंत्रवार्तिक, पृष्ठ–1078
8. गौतम धर्म सूत्र 1/8/8
9. गौतम धर्म सूत्र 1/8/8
10. गौतम धर्म सूत्र 1/8/8
11. राजबली पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृष्ठ–23
12. गौ0घ0सू0 1/8/14–22, आप0 गृ0 सू0 3/8/10–11, मनु 02/16, 20, याज्ञ0 स्मृ0 1/10–11
13. बौ0 गृ0 सू0 4/6/1, का0गृ0सू0 30/1
14. गौ0 ध0 सू0 1/3/3, बौ0ध0सू0 2/6/11/29, आप0 ध0 सू0 2/5/11/12
15. बौ0 गृ0 सू0 1/7/1–8, 37–41
16. आप0 गृ0 सू0 6/14/9–12

17. गौ0ध0सू0 1/8/14–22
18. जै0 गृ0 सूत्र 1/5, 6/3
19. गौ0 ध0 सू0 1/8/14–22
20. काठ0 गृ0 सू0 31/1, मान0 गृ0 सू0 1/12/2 गौ0 गृ0 स0 2/7/1, भार0 गृ0 सू0 1/21
21. धर्म का समाज दर्शन, डॉ0 गीता रानी, पृ0 236
22. राजबलि पाण्डेय, हिदू संस्कार, पृ0 78–79
23. जाते च दारके जातकर्म ।। वि0ध0सू0 27/14
24. पार0 गृ0 सू0 1/16/3, गोभि0 गृ0 सू0 2/7/19–22, खा0 गृ0 सू0 2/2/33 आश्व0 गृ0 सू0 1/15/2
25. वीरमित्रो, भा0 1, पृ0 241
26. गौ0ध0सू0 1/8/14–22
27. बौ0गृ0सू0 2/1/23, आप0 गृ0 सू0 6/15/8, पार0गृ0सू0 1/17/1 मान0 गृ0 सू0 18/1, हिर0 गृ0 सू0 2/2/14/6
28. खादि0 गृ0 सू0 2/3/6, गोभि0 गृ0 सू0 2/8/8
29. राजबली पाण्डेय : हिन्दू संस्कार, पृ0 108
30. बौ0 गृ0 सू0 2/2/1, पार0गृ0सू0 1/17/5, मनु 2/34
31. बौ0गृ0सू0 2/3/1, आप0गृ0सू0 6/16/1, आश्व0 गृ0सू0 1/16/1, पार0गृ0सू0 1/19/1
32. आप0 गृ0 सू0 6/11/1, आश्व0 गृ0 सू0 1/16/5
33. बॉ0 गृ0 सू0 2/4/1, बैखा0 गृ0 सू0 2/23, सांवत्सरिकस्य चूडा करणम्। तृतीय काडप्रतिहते।। पार0 गृ0 सू0 2/1/1–2
34. यथाकुलधर्म वा।। आश्व0 गृ0 सू0 1/17/1, यथामंगल वा सर्वेषाम्, पार0गृ0सू0 2/1/4
35. गौ0ध0सू0 1/8/14–22
36. बौ0गृ0सू0 1/12/2, कौ0गृ0सू0 1/20/1
37. वीरमित्रोदय, भाग–1, पृ0–321
38. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ0 249
39. गौ0ध0सू0 1/1/12, बौ0ध0सू0 01/2/3/8–10
40. गौ0ध0सू0 1/1, आप0ध0सू 0 1/1/1/9, बौ0ध0सू0 1/2/3/7
41. गौ0ध0सू0 1/1/12, बौ0ध0सू0 1/2/3/8–10

42. गौ0ध0सू0 1/1/9, बौ0ध0सू0 1/2/3/7, आप0ध0सू0 1/1/1/16–18
43. गौ0ध0सू0 1/1/5, बौ0ध0सू0 1/2/3/8–10, आप0ध0सू0 1/1/19
44. डॉ0 कैलाश चन्द्र जैन, प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्थाए, पृ0–77
45. आप0गृ0सू0 6/16/12, शा0गृ0सू0 1/28/20, पार0गृ0सू0 2/1/3
46. आश्व0 गृ0सू0 1/18/18, पार0गृ0सू0 2/1/6/16
47. गोभि0 गृ0सू0 3/1/4/4–5, आश्व0 गृ0 सू0 1/18/3–6
48. आप0 गृ0 सू0 6/16/15, बौ0 गृ0 सू0 3/2/55
49. वीर मित्रोदय, भाग–1, पृ0 564
50. बौ0 गृ0 सू0 2/6/1
51. गौ0 ध0 सू0 1/9/1, 1/8/15, 1/2/55, बौ0ध0सू0 1/3/4/10, आप0 ध0सू0 1/2/7/15
52. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ0 1081
53. गौ0 ध0 सू0 1/8/16
54. पाणिग्रहणादधि गृहमेधिनोर्व्रतम्, आप0 ध0 सू0 2/1/1/1
55. सः विधिपूर्वक, स्नात्वाभार्यामधिगम्य यथोक्तान् गृहस्थ धर्मान्प्रयुञ्जान इमानि व्रतान्यनुक्रर्षेत्।। गौ0 ध0 सू0 1/9/1
56. राजबली पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 26
57. जात संस्कारेणामु लोकम्।। बौ0 पितुमेध सूत्र 3/1/4
58. मनु0 2/26
59. गौ0 ध0 सू0 1/8/26
60. आप0 ध0 सू0 2/1/2/4